राजस्थानी नीतिकाव्य की प्रमुख विशेषताएँ : एक विवेचन

[1]सुधा शर्मा
[1]शोधार्थी
[1]हिन्दी विभाग,
[1]ज. रा. ना. राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड टू बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.), भारत

सारांश : राजस्थानी नीतिकाव्य का मूल प्रयोजन नैतिकता के प्रतिष्ठापन द्वारा समाज को सन्मार्ग की ओर अग्रसर करना तथा लोक कल्याण का विधान करना है। इस कारण यह नीतिकाव्य जीवनमूल्यों एवं जीवनादर्शों का काव्य है। इस नीतिकाव्य में अनेक ऐसी विशेषताएँ हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। इन्हीं विशेषताओं का इस शोधपत्र में विवेचन किया गया है, जो एक नूतन प्रयास है।

मूल शब्द **- नीति, नीतिकाव्य, राजस्थानी नीतिकाव्य, विशेषताएँ**

1. प्रस्तावना – 'नीति' से अभिप्राय ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके द्वारा व्यक्ति अथवा समाज को अनुचित मार्ग से उचित मार्ग की ओर चलने के लिए प्रेरित किया जाय। 'नीतिकाव्य' मानव को नैतिक शिक्षा प्रदान करता है। राजस्थानी नीतिकाव्य का मूल प्रयोजन नैतिकता के प्रतिष्ठापन द्वारा समाज को सन्मार्ग की ओर अग्रसर करना तथा लोक कल्याण का विधान करना है। इस कारण यह नीतिकाव्य जीवनमूल्यों एवं जीवनादर्शों का काव्य है। इस नीतिकाव्य में राजस्थान की समस्त मान्यताएँ एवं आदर्श सन्निहित हैं। इस नीतिकाव्य में अनेक ऐसी विशेषताएँ हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। इन्हीं विशेषताओं का इस शोधपत्र में विवेचन किया गया है, जो एक नूतन प्रयास है।

2. राजस्थानी नीतिकाव्य की प्रमुख विशेषताएँ – प्रत्येक देश अथवा भूभाग की अपनी एक विशेष संस्कृति तथा उसके नीतिकाव्य की अपनी निजी विशेषताएँ होती हैं, जिनकी पहचान उसके सांस्कृतिक जीवनमूल्यों एवं जीवनादर्शों से होती है। राजस्थानी नीतिकाव्य की भी अपनी निजी विशेषताएँ हैं जो इसे विशिष्टता प्रदान करती हैं।
इन विशेषताओं का उल्लेख यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

2.1 मातृभूमि के लिए उत्सर्ग होने को वीरता का महत्तम मूल्य

राजस्थान सदैव से वीरत्व एवं शौर्य की क्रीड़ास्थली रहा है। मातृभूमि के लिए उत्सर्ग होने की उत्कट कामना में यहाँ के वीरत्व की अमरता का रहस्य निहित है। राजस्थानी नीतिकाव्य में मातृभूमि के लिए मर–मिटने को वीरता के एक महत्तम मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। मातृभूमि के लिए हँसते हुए बलिदान देने की राजस्थानी परम्परा को कवि नाथूसिंह महरिया ने अपनी रचना **'वीर सतसई'** में इस प्रकार व्यक्त किया है –

सुत मरियो हित देस रै, हरस्यो बंधु समाज।
मां नहं हरषि जन्म दे, जतरी हरषि आज।।[1]

इसी सन्दर्भ में यह कथन भी कितना प्रेरणास्पद है –

रण कर कर रज रज रंगै, रवि ढकै रज हूंत।
रज जितरी रज दे नहीं, रज रज हुय रजपूत।।[2]

2.2 स्वतन्त्रता एवं आत्म सम्मान

इस धरती के वीरों को दासता स्वीकार्य नहीं। उन्हें अपनी स्वतन्त्रता एवं आत्म सम्मान अत्यन्त प्रिय हैं। इनके लिए वे बड़े से बड़ा बलिदान देने को उद्यत रहते हैं। उनके इस गुण को कवि शिवदास गाडण ने अपनी रचना **'वचनिका अचलदास खींची – री'** में प्रश्नोत्तर शैली में अन्योक्ति के माध्यम से इस प्रकार व्यक्त किया है –

अेकहि वन्नि वसंतड़ा अवड़ अंतर काइ ?
सीह कवड्डी नह लहइ, गइवर लक्खि बिकाइ।[3]
गइवर–गळइ गळत्थियउ, जह खंचइ तह जाइ।
सीह गळत्थण जइ सहइ तउ दह लक्खि बिकाइ।।[4]

एक ही वन में बसने वाले सिंह तथा गइवर (हाथी) में इतना अंतर क्यों है ? सिंह का कोई कौड़ी भी नहीं देता, किन्तु हाथी लाख में बिकता है। इसका उत्तर है – हाथी अपने गले में बंधन स्वीकार कर लेता है और इस कारण वह जिधर खींचा जाय उधर ही चला जाता है। यदि सिंह भी इस प्रकार गले में बन्धन स्वीकार करे तो वह दस लाख में बिके। किन्तु उसे अपनी स्वतन्त्रता प्रिय है।

तात्पर्य यह है कि राजस्थान के वीरों को अपनी स्वतन्त्रता प्रिय है। उन्हें दासता स्वीकार नहीं।

2.3 गौवंश, ब्राह्मण, बालक तथा स्त्रियों की रक्षा करना वीरत्व का आवश्यक कर्त्तव्य

राजस्थानी नीतिकाव्य में गौवंश, ब्राह्मण, बालक तथा स्त्रियों की रक्षा करना वीरत्व का आवश्यक कर्त्तव्य माना गया है। नारी के शील एवं सतीत्व की रक्षा के लिए सदैव उद्यत रहने का आदर्श इस नीतिकाव्य में स्थान–स्थान पर दृष्टिगत होता है।

कवि श्रीधर व्यास की रचना **'रणमल्ल छंद'** में ईडराधिपति कमधज (राजा रणमल्ल) अत्यन्त साहसी है और ईडर की तलहटी में सुलतान के यवन सैनिकों के कोलाहल को सुनकर योद्धा कमधज (रणमल्ल) तुरन्त ब्राह्मण, बालक, गायों एवं स्त्रियों की रक्षा हेतु उद्यत हो गया –

असुर अभग अग ईडर तळि, अमपति दळ कोलाहळ सभळि।
बभण बाळ सुरहि अबला छळि, हठि कमधज भुजाबळि।।[5]

इस प्रकार की कर्त्तव्यनिष्ठा के अनेक उदाहरण राजस्थानी नीतिकाव्य में यत्र – तत्र दृष्टिगत होते हैं।

2.4 वचन–पालन या वचन–निर्वाह – एक उत्कृष्ट गुण

वचन–पालन या वचन–निर्वाह को राजस्थानी नीतिकाव्य में एक उत्कृष्ट गुण माना गया है –

रजह पलट्टै दिन वलै, दिनह पलट्टै जांहि,
वङ्कां मिनखां बोलियाँ, वचन पलट्टै नांहि।[6]

अपने वचन को पूरा करने के लिए बड़े से बड़ा त्याग भी तुच्छ माना गया है। कवि पद्मनाभ की रचना **'कान्हडदे प्रबन्ध'** के एक नीति वचनानुसार सज्जन पुरुष भाग्य की चंचलता से अविचलित रहकर अपने अंगीकृत वचन पर अडिग रहते हैं –

पद्मनाभ पंडित भणइ, भावि चंचल होइ,
सज्जन जे अंगीकरइ, वचन न लोपइ सोइ।[7]

2.5 शरणागत वत्सलता – एक उच्च जीवन–मूल्य

शरणागत वत्सलता को राजस्थानी नीतिकाव्य में एक उच्च जीवन–मूल्य के रूप में स्वीकृति मिली है। अपनी शरण में आये हुए की हर मूल्य पर रक्षा करना वीर चरित्र का एक अनिवार्य लक्षण माना गया है।

जब शहाबुद्दीन गोरी द्वारा देश–निर्वासित उसके भाई हुसेन खाँ ने पृथ्वीराज से आश्रय–याचना की तब द्विविधा उत्पन्न हुई। संकल्प–विकल्प की स्थिति में चंद बरदाई ने **'मच्छ रूपं जगदीसं'**[8] में **'सरन रषि वसुमती'**[9] तथा शंकर और सागर के दृष्टान्तों द्वारा कर्त्तव्योपदेश दिया –

संकर गर विष कंद जिम, बडवा अगनि समंद।
तैं रष्षहु चहुआंन तिम, षां हुसेन कहि चंद।।[10]

इससे प्रेरित होकर पृथ्वीराज ने **'सरनागत ध्रंम तैं रषिय'**[11] कहकर हुसेन को आश्रय प्रदान किया तथा शरणागत–रक्षा के अपने नैतिक कर्त्तव्य का निर्वहन किया। कवि ईसरदास की रचना **'हालाँ झालाँ रा कुण्डलिया'** के एक नीति वचनानुसार वीरों के शरणागत उनके मरणोपरान्त ही हाथ लगते हैं।[12]

इस प्रकार के अनेक उदाहरण राजस्थानी नीतिकाव्य में उपलब्ध हैं।

2.6 स्वामिभक्ति – एक नैतिक कर्त्तव्य

एक अन्य जीवन–मूल्य जिसको राजस्थानी नीतिकाव्य में सर्वाधिक प्रतिष्ठा मिली है, वह है – **'स्वामिभक्ति'**, जिसे राजस्थानी में **'स्यामधर्म' (स्वामिधर्म)** कहकर प्रशंसित किया गया है। इस नीतिकाव्य में शास्त्रोक्त–नवरसों के अतिरिक्त 'स्वामिधर्म' को दसवाँ रस मानकर इसके महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है –

वीरा रस, सिणगार रस, हासा रस हित हेज।
साम–धरम–रस साँभलउ, जिम हुइ तनि अति तेज।।[13]

स्वामिधर्म को नैसर्गिक कर्त्तव्य मानते हुए कवि सूर्यमल्ल मिश्रण अपनी रचना **'वीरसतसई'** में कहते हैं कि वे क्षत्राणियाँ धन्य हैं, जिनकी कोख से ऐसे स्वामिभक्त शूरवीर जन्म लेते हैं, जो अपने स्वामी से (जीवन निर्वाह हेतु) मात्र सेर भर आटा ले, उसका नमक खाने के मोल में अपना मस्तक अर्पण कर देते हैं –

हूँ बलिहारी राणियाँ, जाया वस छतीस।
चून सलूणौ सेर लै, मोल समप्पे सीस।।[14]

स्वामिधर्म–पालन के अनेक उदाहरण राजस्थानी नीतिकाव्य में दृष्टिगत होते हैं।

2.7 अत्याचारी को बिना दण्डित किए छोड़ देना – कायरता

राजस्थानी नीतिकाव्य में अत्याचारी को बिना दण्डित किए छोड़ देना कायरता मानी गई है। इसी परिप्रेक्ष्य में पिता के बैर का प्रतिशोध न लेने वाले को कुपुत्र की संज्ञा दी गई है –

जननी जणै कपूत मत, चंगो जोबन खोय।
कै जण बैर–विहंडणो, कै कुलमंडण होय।।[15]

पितृभक्त पृथ्वीराज ने अपने पिता राजा सोमेश्वर का भीमदेव चालुक्य द्वारा युद्ध में वध किए जाने का समाचार पाकर कहा –

धिग ताहि ताहि जीवन प्रमान। साध्यो न तात बैरह बिनान।।[16]

अर्थात् 'उसके जीवन को धिक्कार है, जिसने अपने पिता का बैर नहीं चुकाया।' पृथ्वीराज ने भीमदेव को न मारने तक **'घृत मुक्कि पाघ बंधन तजिय।'**[17] अर्थात् घृत सेवन न करने और पगड़ी न बाँधने का प्रण लिया और राज्याभिषेक के तुरन्त बाद भीमदेव पर चढ़ाई की और युद्ध में उसे मारकर पितृ–बैर का बदला लिया तथा समाज को तदनुसार आचरण करने हेतु प्रेरित किया।

इसमें सन्देह नहीं कि प्रतिशोध को एक उच्च जीवनमूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है और यह अन्याय के प्रतिकार की वांछनीयता से प्रेरित है।

2.8 जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित विषयों पर उपयोगी नीतिवचन उपलब्ध हैं

वस्तुतः राजस्थानी नीतिकाव्य मानव व्यवहार–शास्त्र है। इसमें वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक आदि सभी क्षेत्रों के शताधिक परम्परित विषयों पर उपयोगी नीतिवचन युक्त रचनाओं का सृजन किया गया है, जिनके द्वारा समाज का उचित मार्गदर्शन हुआ

है। इसके साथ ही समाज, काल, परिस्थिति एवं युग की आवश्यकतानुसार नवीन विषयों पर भी नीतिपरक रचनाओं का सृजन हुआ है। लोकतन्त्र, राजनैतिक स्थिति, भ्रष्टाचार, महँगाई, बेरोजगारी, शिक्षा के प्रचार–प्रसार, वर्तमान में गुरु–शिष्य संबंध, पर्यावरण संरक्षण हेतु वृक्षारोपण की आवश्यकता, जल संरक्षण, वैज्ञानिक प्रगति के साथ उससे होने वाले दुष्प्रभावों के प्रति सजगता आदि अनेक विषयों पर अपने उद्‌गार व्यक्त किये हैं, जो जन हितकारी एवं समाजोपयोगी हैं। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं।

कवियों ने वृक्षों की महत्ता को बताते हुए वृक्षारोपण की आवश्यकता को इंगित किया है –

दे ईंधन, फळ, छाँव, मेह् बरसावै मोकळो।
गळी–गळी हर गाँव, बिरछ लगावौ बावळा।।[18]

इसी प्रकार जल–संरक्षण पर भी प्रकाश डाला गया है –

पाणी घणो अमोल है, मती अकारथ ढोल।
बूंद–बूंद कारज सरै, अैसो मारग खोल।।[19]

कवियों ने देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए बालिका–शिक्षा तथा बालिका को समाज में समान अधिकार देने का समर्थन किया है –

बेट्यां बणे सुशिक्षित करां इब यो विचार।
मिले बेट्यां ने समाज रे मांय समान इधकार।।[20]

गुरु–शिष्य सम्बन्धों में आये बड़े परिवर्तन को इस प्रकार व्यक्त किया गया है –

गुरुजन रै मन में नहीं, चेलां रो हित–सार।
चेलां रै चित में नहीं, गुरुजन रो सत्कार।।[21]

नागरमल सहल *'वसुधैव कुटुम्बकम्'* के आदर्श का इस प्रकार स्मरण कराते हैं –

सैं म्हारा म्हे सकल रा, यो सांचो परिवार।
बातां री ब्याळू करयां, नागर पड़ै न पार।।[22]

इसके अतिरिक्त कवियों ने कृषकों एवं मजदूरों की दुर्दशा, नशा–त्याग, दहेज–प्रथा का विरोध आदि अनेक समाजोपयोगी विषयों पर मार्गदर्शन किया है।

2.9 नारी की समाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका को स्वीकारना

राजस्थानी नीतिकाव्य के कतिपय परम्परावादी कवियों एवं संतों ने नारी के अवगुणों का वर्णन किया है, जब कि आधुनिक नीति कवियों ने उनके मत का खण्डन कर नारी की परिवार एवं समाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डाला है। उनके मतानुसार नारी सारे विश्व की जननी है, किन्तु मूर्ख उस पर दोष लगाते हैं –

नारी जननी जगत री, पाळ–पोस दे पोख।
मूरख राम विसार कर, ताहि लगावै दोस।।[23]

नारी अपने सभी रूपों में अपने कर्त्तव्य का भलीभाँति पालन करती है। इसीलिए नीति कवियों ने उसे सुख का आधार कहा है –

नारी थूं नारायणी, थूं जग रो आधार
जुगां–जुगां सूं पोख रैयी, थूं सगलो संसार
माँ–बैन–बेटी थूं ई, थारा रूप अनेक
देखां चायै कोई रूप, थूं सुख रो आधार।[24]

2.10 अनूठा काव्य–रूप : नीतिपरक सम्बोधन काव्य

राजस्थान के नीति–प्रधान मुक्तक–काव्य परम्परा में एक ऐसा अनूठा काव्य–रूप उपलब्ध होता है, जिसे ***'नीतिपरक सम्बोधन काव्य'*** की संज्ञा से अभिहित किया गया है। प्रायः चतुर्थ चरणांत *'व्यक्ति सम्बोधन'* रखकर राजस्थानी नीतिकारों ने अपनत्व का ऐसा अमृत उड़ेला है कि यह नीति–कथन का निराला काव्य–रूप ही बन गया है। एक उदाहरण दृष्टव्य है –

विविध वणाव वणाव, जुगत घणी रचियौ जगत।
कीधी वसत न काय, रुपिया सिरखी राजिया।।[25]

2.11 सर्वाधिक नीतिपरक रचनाओं का सृजन दोहा–सोरठा छंद में

यद्यपि राजस्थानी नीतिकाव्य की रचनाओं का सृजन अनेक छंदों में किया गया है, तथापि दोहा–सोरठा इस नीतिकाव्य का सर्वाधिक लोकप्रिय छंद रहा है, जिसमें किसी भी भाव को अत्यन्त प्रभावकारी एवं मार्मिक रीति से व्यंजित करने की अद्‌भुत क्षमता है। यही कारण है कि यह छंद अनेक सूक्तियों के रूप में जन–जन की वाणी में मुखरित हुआ है। यह छंद अपनी संक्षिप्तता, अभिव्यक्ति की सहजता, कथन की वक्रता और गेयता के कारण सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है। एक उदाहरण दृष्टव्य है।

जीवन में सदैव गतिशील रहने का नैतिक सन्देश डॉ. मनोहर शर्मा अपनी रचना ***'चाल बटावू वीर'*** में इस प्रकार देते हैं –

कण–कण सूं धुन नीसरै, चाल–चाल मतिमान।
बिन चाल्यां जग में नहीं, पावै नर सनमान।।[26]

2.12 अनुभूति वैभव एवं अभिव्यक्ति कौशल का मणि–कांचन योग

इस नीतिकाव्य में अनुभूति वैभव के साथ–साथ अभिव्यक्ति कौशल का मणि–कांचन योग दृष्टिगत होता है। अभिव्यक्ति कौशल सर्वत्र विषयानुकूल है। भाषा–शैली सरल–सुबोध राजस्थानी है, जिसके कारण नीतिपरक रचनाओं में सहज संप्रेषणीयता समाविष्ट हो गई है। देशज शब्दों के प्रयोग ने इन रचनाओं को माटी की सौंधी गंध से महकाया है। भावों की अद्‌भुत अभिव्यक्ति का एक उदाहरण दृष्टव्य है –

खग धारां घोड़ां नरां, सिमिट भरयो सह पाण।
इण थी मुरधर तरळ जळ, पाताळां परमाण।।[27]

'इस वीरभूमि की तलवारों की धार में, यहाँ के घोड़ों में तथा यहाँ के मनुष्यों में सारा जल (तेजस्विता) एकत्रित होकर भर गया है। इसीलिए यहाँ तरल जल पाताल में पहुँच गया है।'

2.13 अनूठी अलंकार सज्जा

इस नीतिकाव्य में अलंकार सज्जा सहज है, सायस नहीं। एक ओर इसमें राजस्थानी के अनूठे एवं सर्वथा मौलिक शब्दालंकार ***'वयण सगाई'*** के निर्वाह से कर्णप्रिय ध्वन्यात्मक सौन्दर्य की सृष्टि हुई है, वहीं आनुप्रासिकता के कारण नादात्मकता और लयात्मकता भी प्रशंसनीय बन पड़ी है। रचनाओं में यमक, श्लेष, उदाहरण, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास, अन्योक्ति, मालोपमा, रूपक, उपमा आदि की उपस्थिति भावोत्कर्ष में पर्याप्त सक्षम है। रचनाओं में उपमान, प्रतीक एवं बिम्ब सभी लोकजीवन से ग्रहण किये गये हैं।

'वयण सगाई' का एक उदाहरण दृष्टव्य है –

तिगुणो सोनो तोल, रोज दियाँ ईं कम पड़ै।
मायड़–ममता मोल, बता सक्यो कुण बावळा।।[28]

आधुनिक काल की नीतिपरक रचनाओं में अनेक नवीन उपमान एवं रूपक भी गढ़े गये हैं। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं।

डॉ. नरेन्द्र भानावत ने भलाई–बुराई, सुख–दुःख से ऊपर उठकर निर्लिप्त एवं निर्द्वन्द्व महापुरुष की उपमा ***'लेटर बक्स'*** से दी है, जो कितनी नवीन और सार्थक प्रतीत होती है –

भली बुरी सब री सुणै, दे सब नै सनमान।
निरलेपी निर्द्वन्द्व रै, लेटर बक्स महान।।[29]

वास्तव में लेटर बक्स अच्छे–बुरे सब प्रकार के समाचार वाहक पत्रों को समान आदर भाव से अपने अन्दर स्थान देता है। किसी के प्रति अच्छी–बुरी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता। इस प्रकार वह महान पुरुष की प्रवृत्ति से समानता रखता है।

जगत में सच्चे सेवक का स्वभाव ***'कूलर'*** के समान होता है। तपती गर्मी में स्वयं गर्मी सहकर दूसरों को ठण्डी हवा देता है –

सांचो सेवक जगत रो, कूलर तणो सुभाव।
तपती गरमी खुद सहै, फेंकै ठण्डी बाव।।[30]

कवि अपने काव्य में संसार के सत्य को हूबहू प्रदर्शित करने के लिए विख्यात है। इस कारण कवि देवकरण ने ***'कवि समै रो कैमरो'*** कहकर नवीन रूपक का सृजन किया है –

कूड़ो साचो कैवणो, है न कवि रे हाथ।
कवि समै रो कैमरो, विश्व बात विख्यात।।[31]

इस प्रकार राजस्थानी नीतिकाव्य में अनेक नवीन उपमानों एवं रूपकों का सृजन हुआ है।

3. निष्कर्ष – राजस्थानी नीतिकाव्य की विशेषताओं के विवेचन से यह तथ्य उजागर होता है कि यह नीतिकाव्य उच्च नैतिक जीवन मूल्यों का प्रतिष्ठापन तथा उदात्त परम्पराओं का गौरव–गान है। यह नीतिकाव्य जहाँ अपनी परम्पराओं से जुड़ा होने के कारण नीति के शाश्वत स्वरूप को प्रस्तुत कर रहा है, वहीं युग सापेक्ष रचनाधर्मिता के दायित्व का निर्वहन कर समाज का उचित दिशा निर्देशन कर रहा है। इस नीतिकाव्य के रचना कार्य का एक उल्लेखनीय बिन्दु यह है कि कवि वैचारिक स्तर पर अन्ध आस्थाओं के अनुगमनकर्त्ता न बनकर युग जीवन और लोकमंगल की आस्थाओं के जीवन साक्ष्य बन गए हैं। यह दृष्टिकोण उनके सृजनात्मक वैशिष्ट्य को ऊर्जावान तथा युग सम्प्रेरक बनाता है। इस नीतिकाव्य ने आज के युग में द्रुत गति से हो रहे नैतिक क्षरण के प्रति समाज को चेताया है तथा ह्रासोन्मुख समाज को शाश्वत जीवन मूल्यों से जोड़ने का निरन्तर प्रयास किया है। निश्चय ही इस नीतिकाव्य के रचयिता अभिवन्दनीय हैं।

सन्दर्भ :

1. महरिया, नाथूसिंह, 'वीर सतसई', 'आधुनिक राजस्थानी पद्य साहित्य', 1991, बी. एल. माली 'अशांत', राजस्थानी भाषा बाल साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट, लक्ष्मणगढ़ (सीकर), पृ. 43 पर उद्धृत।
2. जोधा, समुद्रसिंह, 2009, 'राजस्थानी दोहावली', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 46/206।
3. गाडण, शिवदास, 1960, 'वचनिका अचलदास खींची – री', सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, पृ. 5/7।
4. वही, पृ. 6/8।
5. व्यास, श्रीधर, 1972, 'रणमल्ल छंद', (सं.) मूलचन्द 'प्राणेश', भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर, पृ. 53/55।
6. रिणथंभोर रै रांणै हमीर हठालै रा कवित्त (अज्ञात), कवित्त 15, दोहा 1, 'हम्मीरायण' (भाडउ व्यास), वि. सं. 2017, (सं.) भँवरलाल नाहटा, सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, परिशिष्ट (2), पृ. 49।
7. पद्मनाथ, वि. सं. 1913, 'कान्हडदे प्रबन्ध', खण्ड 4, 112, (सं.) डाह्याभाई पीताम्बर देरासरी, दी यूनियन प्रिंटिंग प्रेस कंपनी लिमिटेड, अहमदाबाद, पृ. 81।
8. बरदाई, चंद, 1906, 'पृथ्वीराज रासो', भाग 1, छंद 16, (सं.) मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या एवं श्यामसुन्दरदास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृ. 389।
9. वही, छंद 16, पूर्वोद्धृत, पृ. 389।
10. वही, छंद 17, पूर्वोद्धृत, पृ. 390।
11. वही, छंद 20, पूर्वोद्धृत, पृ. 391।
12. बारहट ईसरदास, 1998, 'हालाँ झालाँ रा कुण्डलिया', (सं.) मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 28/12।
13. कवि हेमरतन, 1966, 'गोरा बादल पदमिणी चउपई', पहलो खंड, दूहा 5, (सं.) डॉ. उदयसिंह भटनागर, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, पृ. 21।

14. मिश्रण, सूर्यमल्ल, 'वीरसतसई', दोहा सं. 100, (सं.) शंभुसिंह मनोहर, उपमा प्रकाशन, जयपुर, पृ. 116।
15. मनोहर, शंभुसिंह, 1987, 'राजस्थानी रसधारा', भूमिका, श्याम प्रकाशन, जयपुर, पृ. 23 पर उद्धृत।
16. बरदाई, चंद, 1907, 'पृथ्वीराज रासो', तीसरा भाग, छंद 125, (सं.) मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या एवं श्यामसुन्दरदास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृ. 1148।
17. वही, छंद 124, पूर्वोद्धृत, पृ. 1148।
18. ताऊ शेखावाटी, 1999, 'सोरठां री सौरम (बावळा रा सोरठा)', रचना प्रकाशन, जयपुर, पृ. 114/197।
19. 'पाणी री रक्षा', संपादकी, 2001, जागती जोत, बरस 30, अंक 1, अप्रैल 2001, पृ. 6 पर उद्धृत।
20. गोस्वामी, रंजना, 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ', जागती जोत, बरस 45, संयुक्तांक जुलाई 2014 – मार्च 2017, पृ. 54।
21. शर्मा, डॉ. मनोहर, 1995, 'माणक–मोती', विश्वम्भरा, वर्ष 27, अंक 1, जनवरी – मार्च 1995, पृ. 23/30।
22. सहल, नागरमल, 1995, 'सहल सतसई', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 62/307।
23. राजस्थानी गंगा, 1986, खंड 2, भाग 4, अक्टूबर – दिसम्बर 1986, पृ. 37/526।
24. गोस्वामी, रंजना, 2013, 'नारी थूं सुख रो आधार', जागती जोत, बरस 41, अंक 3–4, जून–जुलाई 2013, पृ. 95।
25. कविया, डॉ. शक्तिदान, 2011, 'राजिया रा सोरठा', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 33/54।
26. शर्मा, डॉ. मनोहर, 2015, 'चाल बटावू वीर', वरदा, वर्ष 58, अंक 3–4 संयुक्त, जुलाई 2015 – दिसम्बर 2015, पृ. 78/8।
27. जोधा, समुद्रसिंह, 2009, 'राजस्थानी दोहावली', राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 45/201।
28. ताऊ शेखावाटी, 1999, 'सोरठां री सौरम (बावळा रा सोरठा)', रचना प्रकाशन, जयपुर, पृ. 22/15।
29. भानावत, डॉ. नरेन्द्र, 1986, 'दूहा सतक (राजस्थानी दोहे)', अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्, जयपुर, पृ. 24/71।
30. वही, पृ. 9/25।
31. 'दासोड़ी', गिरधरदान रतनू, 2003, 'मरुधर री मठोठ', पुस्तक मन्दिर, बीकानेर, 'आज डिंगळ काव्य मांय जुगबोध' लेख में पृ. 92 पर उद्धृत।